E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
IJPSG 2023; 5(2): 174-176
www.journalofpoliticalscience.com
Received: 09-09-2023
Accepted: 16-10-2023

हरविन्द्र सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग, एस0 पी0 (पी0जी0) कॉलेज, तिगरी, चाँदपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
हरविन्द्र सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग, एस0 पी0 (पी0जी0) कॉलेज, तिगरी, चाँदपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

भारत में अस्मिता की राजनीति का उदय एक विषलेशण

हरविन्द्र सिंह

DOI: https://doi.org/10.33545/26646021.2023.v5.i2c.279

सारांश
''वस्तुतः जब गठबन्धन की राजनीति भारतीय राज्य व्यवस्था को नियति के रूप में मजबूरी प्रदान करती जा रही है, तो आवश्यकता इस बात की है कि तमाम क्षेत्रीय दल भी ठोस राजनीतिक विचारधारा और कार्यक्रम लेकर ही केन्द्रीय सरकार में भगीदारी का निर्वहन करें। गठबन्धन के घटकों को अपने आप को इस दिशा में मजबूत करना होगा और मानसिक रूप से तैयार करना होगा कि वे राष्ट्रीय हित के सम्मुख क्षेत्रीय हितों को तिलांजलि देने का साहस दिखा सकें। उन्हें भ्रष्टाचार एवं राजनीति में अपराधीकरण को बढ़ावा देने से स्वयं को दूर रखना ही होगा। व्यक्ति–पूजा के स्थान पर सिद्धांतों एंव नैतिक मूल्यों पर आधारित राजनीतिक दलो का गठन करना होगा। इसी स्थिति में पहुंचकर गठबन्धन की राजनीति लोकतंत्र की सच्ची हिमायती बन सकती है।''

कूटशब्द : त्रिशंकु लोक सभा में गठबन्धन सरकार का अभ्युदय व विकास

प्रस्तावना
नवम्बर 1989 में नवीं लोकसभा का चुनाव हुआ, जिसमें आठ राष्ट्रीय दलों, 33 राज्य दलों और 301 रजिस्ट्रर्ड पार्टियों ने भाग लिया 1989 में चुनाव में काग्रेस पार्टी को मिले कुल स्थानों का प्रतिशत उसे मिले कुल मतों से कम रहा। नवीं लोकसभा के काल से भारतीय राजनीति में नये समीकरण तथा संस्कृति का जन्म हुआ यदि हम विगत इक्कीस वर्षों में (1989–2010) लोकसभाई राजनीति को देखें तो त्रिशंकु सरकारों के बनने–बिगड़ने में देश व देश की जनता का हित व कल्याण भावना नहीं, अपितु त्रिशंकु सरकारों के घटकों में स्वार्थ छिपे हैं। तमाम सरकारें अपने–अपने स्वार्थों की हितों की पूर्ति की आशा से एकत्रित हुए दलों में जमाव मात्र होते हैं और जब स्वार्थ पूर्ति में कोई बाधा आ जाती है, तो सरकार को गिराने में कतई देर नहीं की जाती।
त्रिशंकु लोकसभाओं के कारण अपनी सिद्धान्तहीनता की राजनीति के चलते संसद और प्रषासनिक मामलो के बीच एक अलिखित समझौता बन गया, जिससे एक दूसरे के हित साधन होते रहे और इसी प्रवृति के चलते आज भारतीय संसद की तरफ खूब उंगलियां उठने लगी हैं। सत्ता प्राप्त करने की होड़, राजनीतिक स्वार्थपरता, सामाजिक लाभ, सिद्धान्त–विहीन गठबंधन, व्यक्तिगत हितों की प्राथमिकता प्रायः यही विषेशताएं केन्द्र की उन सरकारों का निर्माण जिन राजनीतिक दलों के गठबंधन से हुआ, उनमें परस्पर विरोधी विचार धारा वाले राजनीतिक दल भी सम्मिलित थे। त्रिशंकु लोक सभाओं का निष्पादन अत्यधिक निराशापूर्ण और असंतोष जनक रहा। त्रिशंकु लोक सभाओं के विनाश का कारण स्वयं उनकी निर्माण प्रक्रिया में निहित रहा है। इसलिए कर्मचारी व प्रशासनिक अधिकारी भी अपने दायित्वों के निर्वाहन में पूरी रूचि नहीं लेते। देखने में तो ये भी आया है त्रिशंकु लोक सभाओं के कार्यकाल में सामान्य प्रशासन विषेशकर शान्ति एवं सुव्यवस्था की स्थिति बहुत खराब रही है।
केन्द्र में गठित होने वाली मिश्रित सरकारों में क्षेत्रीय दलों का बाहुल्य रहा और सरकार बनवानें में उन्होने सक्रिय भूमिका का निर्वहन किया। इसी के परिणाम स्वरूप 1989 के बाद केन्द्र सरकार पर क्षेत्रीय दलों का प्रभाव निरन्तर बढ़ता जा रहा है। सामान्यता क्षेत्रीय और स्थानीय मुद्दो यहां तक कि व्यक्तिगत मामलों को लेकर छोटे–छोटे घटक दलों के नेता सरकार से अलग होने की धमकी देकर अपनी बात मनवाने का प्रयास कर रहे है। इस प्रकार क्षेत्रीय राजनीतिक दलों तथा राज्यों में सत्तारूढ़ राजनीतिक दलों पर केन्द्र सरकार की निर्भरता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। बाहर से समर्थन देने की पद्धति मिलीजुली सरकारों के अस्थायित्व के लिए मूलरूप से जिम्मेदार रही। मंत्रिमण्डल में औपचारिक रूप से सम्मिलित न होने के कारण इन दलों ने तमाशायी की भूमिका अदा की। इसे गम्भीरता से नहीं लिया और छोटी–छोटी बातों को लेकर तरह–तरह के बहाने बनाकर सरकारें बनवायी और भंग करायी।

उन्हानें स्थिति का लाभ उठाया और सत्तारूढ़ दल को ब्लैकमेल किया। निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि जब से त्रिशंकु लोकसभाओं का प्रारम्भ हुआ है, तबसे राजनीतिक क्षेत्रों में निरन्तर पतन होता जा रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप चाहें प्रशासनिक क्षेत्र हो या आर्थिक क्षेत्र, सब तरफ अनियमिताओं व अव्यवस्थाओं का दौर सा प्रारम्भ हो गया। त्रिशंकु लोकसभाओं में राष्ट्रीय हित का साधन या जनकल्याण की भावना गौण हो जाती है, वहां केवल सत्ता सुख हथियाने की होड़ होती है। इसी कारण राजनीति का अपराधीकरण होता रहा है।

संसदीय प्रणाली के कार्यकरण में किसी भी प्रकार विकृति विपथन लोकतंत्र के किसी भी उदेश्य को नुकसान पहुचाता है। निरकुंश प्रवृत्तियां और अत्यन्त कठोर मार्ग अपनाने से लोकतंत्र का मूल सिद्धान्त ही निरस्त हो जाता है। आपात जैसी दुखद घटना और–भारतीय संसद पर दुखद प्रभाव को भूतकाल का दुर्भाग्यपूर्ण कंलक माना जाना चाहिए। हमें इस प्रकार के सभी के चिंता कारणों से हमेशा के लिए अवश्य छुटकारा प्राप्त कर लेना चाहिए। इस समय रुढ़िवादी और आतंकवादी स्वयं हमारी संसद सहित लोकतांत्रिक संस्थाओं के विरूद्ध पापपूर्ण षड्यंत्र रच रहे हैं। हमें इस अभिशाप का साहस और दृढ़ता से मुकाबला करना चाहिए। हमारा प्रयास होना चाहिए कि संसदीय संस्थाओं की भव्यता को बनाये रखने, सामाजिक और आर्थिक न्याय को सुनिश्चित करने और देश के धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक स्वरूप की शान बढ़ाने का कार्य करें। हमें न्यायपरक कार्य करने के प्रति अपनी वचनबद्धता के द्वारा भारतीय लोकतंत्र के परचम को ऊँचा उठाये रखना होगा। भारत का सकल घरेलू उम्पाद चीन से कम है। चीन ने हमसे अधिक प्रगति की है और एक विश्वशक्ति बन गया है, परन्तु भारत मात्र क्षेत्रीय शक्ति ही बना हुआ है, लेकिन स्वतंत्रता का सकल घरेलू उत्पाद से अधिक महत्व है। जहाँ स्वतंत्रता का अभाव होता है, वहाँ जीवन जीने योग्य नहीं होता है। राष्ट्रीय आम सहमति के कमजोर हाने और समाज में अन्तर्निहित विरोधी भाषा के बावजूद भारत में किसी न किसी रूप में लोकतंत्र के बनाए रखने की क्षमता है।

एक शासन प्रणाली के रूप में प्रजातंत्र तभी बना रहेगा, यदि प्रतिनिधियों को चुनने हेतु होने वाले चुनाव आवधिक रूप से स्वतंत्र निष्पक्ष एवं समान रूप से कराये जाएं, तथापि विगत सालों के दौरान उत्पन्न कई घृणित घटनाएं देश में हो चुकी हैं जिन्हानें चुनावों को एक मजाक बना दिया है। चुनावों को जीतने के लिए गैरकानूनी तथा अनैतिक तरीकों का सहारा लिया जाता है। निर्भयतापूर्वक धन बल, बाहुबल का प्रयोग तथा भ्रष्ट एवं अनुचित हथकण्डे अपनाने का सिलसिला बढ़ाता ही जा रहा है। कोष जुटाने व उनके उपयोग में राजनीतिक दलों द्वारा कई अन्य हथकण्डे व अनुचित तरीके अपनाने, घूसखोरी पदाधिकारियों पर शक्तियों के दुरूपयोग ने हमारी व्यवस्था को दूषित कर दिया है। चुनाव प्रक्रिया में सुधार की मांग अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी है। क्षेत्रीय पार्टियों की शक्ति और सामर्थ्य में इजाफा होते जाने से सयुक्त मोर्चा सरकार की राजनीति अत्याधिक आत्यावश्क बन गई है। हम स्थानीय नक्शे पर ऐसे ताकतवर क्षेत्रीय राज्य स्तर और स्थानीय स्तर पर राजनीतिक समूहों की भरमार पाते है। जो न सिर्फ राज्यों की राजनीति में बल्कि केन्द्र की राजनीति में धमाका कर रहे हैं। सरकारी तौर पर स्वीकृत राज्य स्तर की तीस पार्टियों ने 1996 में लोकसभा का चुनाव लड़ा था। उन्होंने कुल मिलाकर आठ मे छः राष्ट्रीय दलों से अधिक सीटे जीती जबकि कांग्रेस और भाजपा को छोडकर शेष छः राष्ट्रीय दलों ने 102 सीटें जीतीं, मान्यता प्राप्त राज्य स्तर की तीस पार्टियो ने 130 सीटे जीत लीं।

भारतीय समाज और राज्यतंत्र की साझा प्रकृति के चलते गठबंधन की राजनीति को अपवाद या विपथगमन न होकर उसका एक मानदण्ड होना चाहिए, अपना उपमहाद्वीप आयामों, बहुलता और बहुमुखी पहचानों के साथ भारतीय बहुलता इतनी बहुआयामी है कि अपने निर्धारत विचारों वाला कोई एक राजनीतिक संगठन इन तमाम विविध हितों को अपने दायरे मे नहीं ला सकता है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि पिछले कुछ दशकों में बिदवई जातियाँ, दलित वर्गो और विभिन्न नृजातीय समूहों के दावों के फलस्वरूप सामाजिक साझेदारी टुकड़े–टुकड़े हो गई। सामाजिक क्षितिज ऐसे समूहों और उप समूहों मे बट गया जो वर्ग जाति, नृजातियता और क्षेत्रों के आधार पर विभाजित थे। इसका नतीजा यह हुआ कि, ''भारतीय राजनीति अकारम रूप में केन्द्र बड़ादल के नमूने से अलग होकर अत्यन्त बहुलवादी संघीय, बहुदलीय प्रणाली में विकसित हो रही है। गठबन्धन की राजनीति इस बात की तार्किक अव्यव है। भारत में संयुक्त मोर्चा की सम्भावनाऐं ठांठस बँधने वाली प्रतीत नही होती है संयुक्त मोर्चा तदर्थ और अवसरवादी प्रकृति का है उनके कार्यक्रम अत्यन्त आत्म केन्द्रित और सनक से ग्रसित है, वे लूट और संरक्षण के अल्पकालिक लाभों के लिए व्यक्तिगत और विभागीय हितों के जरीये ढ़ीले तरीके से एक साथ बधें हुए है।

राज्य स्तर पर मिली जुली सरकारों का प्रयोग आज से चालीस वर्ष पहले अपनाया गया था 1967 से 1970 के दशकों में यह प्रयोग लगभग पूर्णतः असफल रहा लेकिन आगे चलकर सम्भवतया राजनीतिक दलों ने राजनीतिक यर्थाथ को अच्छे रूप मे समझा लेकिन केन्द्रीय स्तर पर मिली जुली सरकारें निराशा के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे पायीं और हम इन सरकारों को असफल कहने के लिए विवश है इन सरकारों को असफल कह देने मात्र से ही हमारे अध्ययन की इतिश्री नही हो जाती बहुदलीय व्यवस्था बनी हुई है। बहुदलीय व्यवस्था में एक दल की प्रधानता समाप्त हो गई है। सही और सम्पूर्ण अर्थों में कोई भी राजनीतिक दल अखिल भारतीय दल नही है इन स्थितियों के परिणाम स्वरूप ''त्रिशंकु लोक सभा और खण्डित जनादेश'' की महामारी ने अब केन्द्र को ग्रसित कर लिया है ऐसी स्थिति में संसदीय व्यवस्था के अर्न्तगत हमारे पास केन्द्रीय स्तर पर मिली–जुली सरकारों की परिधि में ही हमें भविष्य के लिए मार्ग खोजना होगा कि केन्द्रीय स्तर पर मिली–जुली सरकारों के गंठन और कार्यक्रम का स्वरूप क्या हो तथा मिली–जुली सरकारों के प्रसंग में इस वांछित स्थिति को कैसे प्राप्त किया जा सकता है? राजनीतिक ''संभावनाओं का खेल'' और ''परिस्थितियों पर निर्भर'' गतिशील कला है। अतः अन्तिम रूप से कुछ कह पाना तो संभव नहीं है लेकिन कुछ सुझाव अवश्य ही दिये जा सकते है। भवानी सैन गुप्ता की इन पंक्तियों में गहरी सच्चाई अवश्य देती है कि ''मिली जुली सरकारों के गठन जीवन तथा कार्यकरण के लिए जिस प्रतिभा और संस्कृति की आवश्यकता होती है, भारत की लोकतान्त्रिक राजनीति में वस्तुतः उसका अभाव रहा है। अस्थाई मिली–जुली सरकारों के क्रम ने राज्यों का संकट में योगदान किया है, क्योंकि राज्यों के साथ गुथा हुआ है।'' आर्थिक सुधारों को आगे बढ़ाने में आ रही राजनीतिक अड़चनों का सन्दर्भ देते हुए सितम्बर 2006 में जे.आर.डी. टाटा स्मारक व्याख्यान में वित्तमंत्री पी० चिदम्बरम् ने गठबंधन सरकार की खूबियों और कमजोरियों पर प्रकाश डाला था, जहाँ एक तरफ उन्होनें यह कहकर गठबन्धन सरकारों को बेहतर बताया कि इसमें फैसले छनकर आते हैं और वे टिकाऊ होते हैं, वहीं उन्होनें इस बात पर अपनी चिन्ता भी जाहिर की थी कि संसद में तों बहुमत से काम नहीं चल जाता है लेकिन गठबंन्धन में बहुमत नहीं आम सहमति की जरूरत पड़ती है और इसके लिए कई बार लम्बे समय तक इंतजार करना पड़ता है। उन्होनें कहा कि आम सहमति बनाने में कई बार इतना समय लग जाता है कि मौका हाथ से निकल जाता है। गठबन्धन सरकार के सत्ता में होनें से उसकी स्थिरता पर हर समय प्रश्न चिन्ह लगा रहता है, जिससे सरकार को मजबूरी बस लोकप्रियता व उदारवादी रवैया अपनाना पड़ जाता है बाहर से समर्थन देने वाले राजनीतिक दलों का उद्देश्य

निरन्तर दबाव की राजनीति को अपनाना ही रह गया है। ''बाहरी समर्थन के आधार पर कार्यरत अल्पमतीय और सूक्ष्ममतीय सरकारों का प्रयोग पूर्णतः असफल सिद्ध हुआ है।''

अतः इस स्थिति को पूर्णतः स्वीकार कर देना चाहिए। जो राजनीतिक दल सरकार को समर्थन देना चाहते है उन्हें सरकार में शामिल होने के लिए न केवल प्रेरित करना चाहिए वरन् बाध्य किया जाना चाहिए। ताकि वे सही अर्थों में साझीदार की भूमिका निभा सकें। अनेक जटिल सम्सयाओं का समाधान भी गठबंधन सरकार के दौर में होता है। भारतीय जनता पार्टी राम जन्मभूमि, संविधान की धारा 370 और समाज सिविल कोड जैसे मसलों को गठबंधन की राजनीति के तहत त्यागने को तैयार हुई। भारत के बहुलतावाद में एक पार्टी या दो पार्टियों के लोकतंत्र को कोई जगह नहीं है। यहाँ सैंकडो भाषाएं बोली जाती है। अनेक राज्य है। हजारों जातियां है। अनेक समुदाय है और एक राष्ट्रीय आकांक्षा के साथ सबकी अपनी–अपनी अलग आंकाक्षाएं भी है। इन सबकी पूर्ति गठबंधन राजनीति से ही संभव है।

अच्छा हो पार्टियाँ इस हकीकत को स्वीकार कर लें, तो देश के लोकतंत्र का ज्यादा भला होगा।

भारतीय संसदीय लोकतंत्र भी अन्य कई संसदीय देशों के भांति बहुदलीय प्रणाली पर आधारित है और प्रणाली में गठबन्धन सरकारों का गठन एक स्वाभाविक क्रिया के रूप में होता है। 1989 के लोकसभा निर्वाचन के पश्चात् भारत में किसी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला, इसलिए आज गठबंधन की सरकारें राजनीति का यथार्थ हैं। यूरोप के अधिकांश देशों इजराइल तथा द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् अन्य पश्चिमी देशों जैसे स्वीडन, डेनमार्क, बेल्जियम, हॉलैण्ड आदि में लगभग पिछले 29 वर्षों से गठबन्धन सरकारें काम कर रही हैं। पश्चिमी देशों में गठबन्धन चुनाव पूर्व होता है और वे मतदाताओं को साफ बता देते हैं कि उनकी ये विचारधाराएं हैं और वे इन मुद्दों पर समझौता कर रहे हैं। चुनाव पूर्ण गठबन्धन से सरकार के बने रहने की सम्भावना अधिक होती है। गठबन्धन के लिए कुछ बातें आवश्यक हैं जैसे परस्पर स्वतंत्र संवाद और विचार–विमर्श सरकार के कार्यों के प्रति आस्था और समर्पण के साथ कार्य करने की भावना। गठबंधन संस्कृति का यह अर्थ कदापि नहीं है कि राजनीतिक दल अपनी नीति का त्याग करें बल्कि नीतियों के सामान्य सूत्र बनाकर उन्हें आगे बढ़ाया जाये। विचार विमर्श की प्रक्रिया जारी रखने से ही लोकतंत्र का आधार निर्मित होता है।13

इस हेतु भारतीय मतदाता को भी समझदारी लानी होगी ताकि मतदान व्यवहार से गठबंधन में सम्मिलित किसी दल के पास इतनी सीटें अवश्य हों व सरकार के स्थायित्व के लिए वो 'मील के पत्थर' का काम करे। जैसा हर बार चुनावों में देखा गया है।14 किसी भी स्थिति में राष्ट्रीयता को क्षेत्रीयता या जातीयता के सामने घुटने नहीं टेकने देने चाहिए। इसके लिए मतदाताओं में अच्छी सोच और नई कार्यकरण की गतिविधियों की जानकारी होना भी आवश्यक है, क्योंकि इस व्यवस्था से स्मिता की राजनीति पर अंकुश लगेगा और उत्तम विचारधारा विकसित करने का अवसर भी प्राप्त होगा।

सन्दर्भ

1. नीरद चौधरी : करप्शन इन इण्डियन पॉलिटिक्स, दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 5 मई 1968
2. एस.एम. सईद : भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, पृ. 297
3. एस.एम. सईद : भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, पृ. 304
4. बुद्ध देव भट्टाचार्य : भारत में संसदीय लोकतंत्र : कुछ विचार
5. स. गुरुदीप चन्द मल्होत्रा : भारतीय संसद के 50 वर्ष, पृ. 268
6. रमेश चेन्नितला : संसदीय लोकतंत्र के पांच दशक, संकलित – भारतीय संसद के पचास वर्ष, पृ. 277
7. स. गुरुदीप चन्द मल्होत्रा : भारतीय संसद के 50 वर्ष, पृ. 270
8. पुखराज जैन एवं राजेश जैन : भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिशर्स, आगरा, पृ. 353
9. पुखराज जैन एवं राजेश जैन : भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिशर्स, आगरा, पृ. 357
10. भवानी सैन गुप्ता : इण्डिया प्राब्लम्स, ऑफ गवर्नन्स, नई दिल्ली, कोनार्क, 1996, पेज–104
11. सुन्दर राम इण्डियन डैमोक्रेसी प्रोस्पैक्टस एण्ड रीट्रोस्पैक्ट, 1996, पेज–161
12. डॉ. पुखराज जैन एवं डा. बी.एल. फडिया : भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2008, पृ. 613
13. नीता बोरा शर्मा : गठबंधन सरकारें और भारतीय राजनीति, क्वैस्ट, नवम्बर 2009, पृ. 177
14. नीता बोरा शर्मा : गठबंधन सरकारें और भारतीय राजनीति, क्वैस्ट, नवम्बर 2009, पृ. 179